AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International

ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

उमेश कुमार चौरसिया के नाटकों में मूल्य -बोध

बलदेव राम[1], डॉ. राजेश कुमार शर्मा[2]
[1]शोधार्थी , हिंदी विभाग, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर
[2]एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर

DECLARATION: I AS AN AUTHOR OF THIS PAPER / ARTICLE, HEREBY DECLARE THAT THE PAPER SUBMITTED BY ME FORPUBLICATION IN THIS JOURNAL IS COMPLETELY MY OWN PREPARED PAPER.. I HAVE CHECKED MY PAPER THROUGH MYGUIDE/SUPERVISOR/EXPERT AND IF ANY ISSUE REGARDING COPYRIGHT/PATENT/ PLAGIARISM/ OTHER REAL AUTHOR ARISE THE PUBLISHER WIL NOT BE LEGALLY RESPONSIBLE IF ANY OF SUCH MATTER OCCUR PUBLISHER MAYREMOVE MY CONTENT FROM THE JOURNAL

जीवन मूल्यों का चित्रण

स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। स्वतन्त्रता से पूर्व देखे गये स्वप्न स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद टूट गये। देश विभाजन ने व्यक्ति के मन में व्यक्ति के प्रति घृणा की आग भर दी।[1] बेरोजगारी, संत्रास, भय एवं अकेलापन आदि ने जीवन की संवेदनाओं, अनुभूतियों, पारिवारिक विघटन, अन्तर्बाह्य जटिलताओं एवं मूल्य संक्रमण की स्थिति आदि का चित्रण सामान्यतः हुआ। उमेश कुमार चौरसिया जी का लेखन भी इन परिस्थितियों के चित्रण से अछूते नहीं है। उन्होंने आधुनिक युगबोध को वैयक्तिक अनुभूति तथा संवेदना के आधार पर अभिव्यंजित किया है।[2] उमेश कुमार चौरसिया जी ने मानव व्यतिव को आधुनिकता से संबद्ध करते हुए बढ़ती आकुलता, संत्रास, नैराश्य एवं भावनाओं से हटाकर आत्मानन्द केन्द्रित किया है।[3] चौरसिया की इन नाट्यकृति 'शौर्य प्रधान नाटक' में मत चूके चौहान, वीरांगना पन्नाधाय, खूब लड़ी मर्दानी, आउवा तुझे प्रणाम और दाहरसेन का बलिदान ये पांच रोचक व प्रभावी नाटक शामिल हैं जिसमें देश प्रेम रूपी मूल्य का चित्रण है। इनमें मुगल गौरी से संघर्ष करने वाले अजमेर के सम्राट पृथ्वीराज चौहान के मातृभूमि की रक्षा के लिए, पुत्र का बलिदान करने वाली वीरांगना पन्नाधाय, अंग्रेजों से आजादी की लड़ाई लड़ने वाली 1857 की क्रांति के अग्रदूत रानी लक्ष्मीबाई और ठाकुर खुशाल सिंह तथा सिंध की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पित करने वाले दाहरसेन की शौर्य गाथाओं को दर्शाया गया है।[4] ये सभी कथानक जहाँ तात्कालिक संघर्षपूर्ण परिस्थितियों को उजागर करते हैं वहीं वर्तमान संदर्भ को भी परिलक्षित करते हैं।

प्रयोगधर्मी नाट्य लेखक व निर्देशक, शैक्षिक व बाल रंगमंच विशेषज्ञ, लघु फिल्म निर्देशक, कवि–गीतकार, लघुकथा–सामयिक आलेख व स्तंभ लेखक और आलोचक–समीक्षक के रूप में सुपरिचित, उमेश कुमार चौरसिया ने राजस्थानी व हिन्दी में समान रूप से लेखन में सिद्वहस्त चौरसिया जी ने जीवन मूल्यों पर बखूबी

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

प्रकाश डालकर मार्गदर्शक की भूमिका का निर्वहन किया है। आपके लिखे नाटक देशभर में कई बार सफलतापूर्वक मंचित तथा दूरदर्शन व आकाशवाणी से प्रसारित हुए तथा मूल्यों से साक्षात परिचय करवाया।[5] उमेश कुमार चौरसिया जी बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रंगकर्मी, नाटककार, बाल सहित्य लेखक एवं प्रबुद्ध साहित्यकार हैं। किंतु नाटककार के रूप में उनकी पहचान सर्वोपरी है। तथा इनका मानना था कि नाटक दृश्य काव्य की श्रेणी में आता है तथा यह ही जनमानस को मूल्यों की ओर अग्रसर करने की सबसे प्रभावी विद्या है। आधुनिक हिन्दी नाटक के विकास यात्रा में नरेन्द्र से विवेकानन्द, मेघावी नरेन्द्र, कर्त्तव्य पथ, कुन्ती की व्यथा, टूटता भ्रम, मत चूके चौहान, वीरांगना पन्नाधाय, खूब लड़ी मर्दानी, दाहरसेन का बलिदान ,आउवा तुझे प्रणाम, इदं राष्ट्राय, अलटू–पलटू चूहे, बोतल का जिन, धूर्त चिंपू लोमड़ी, चंदा मामा दूर के, पेड़ की सुनो, कथा गधे की, नन्हीं हवा, राम कबीरा एक है, ओ अहल्या!, बाल–मन, आजाद की शहादत आदि ने महत्वपूर्ण योगदान निभाया है ।[6]

नाटक के बारे में चौरसिया जी की धारणा है कि जिस नाटक में रंगमंचीय अपेक्षाओं की उपेक्षा हुई हो, उसे साहित्यिक मूल्य रहते हुए भी नाट्य कृति नहीं मानी जा सकता। इस कथन से स्पष्ट होता है कि नाटक की संपूर्णता सफल मंचीय प्रदर्शन में ही निहीत है ।[7]

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी नाटक की श्रृंखला में 'नरेन्द्र से विवेकानन्द' एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में उल्लेखनीय है। यह चौरसिया जी का बहुचर्चित तथा लोकप्रिय नाटक है। इसमें नाटककार ने विवेकानंद जी को भारत गौरव के प्रति युवा चेतना के एक प्रतीक के रूप में चित्रित किया है। तथा विवेकानंद के आदर्शो को उदघटित किया है।

वरिष्ठ नाट्य विशेषज्ञ उमेश कुमार चौरसिया ने अपने व्याख्यान में कहा कि बाल साहित्य की सभी विधाओं में बाल नाटक एक ऐसी प्रभावी विधा है जिसमें बच्चों में मूल्यों के निर्माण की क्षमता होती है।[9]

सामाजिक यथार्थ का चित्रण, दाम्पत्य संबंध एवं विवाहेत्तर संबंध

चौरसिया जी की नाट्यकृति में मत चूके चौहान, वीरांगना पन्नाधाय, खूब लड़ी मर्दानी, आउवा तुझे प्रणाम और दाहरसेन का बलिदान ये पांच रोचक व प्रभावी नाटक शामिल हैं इनमें मुगल गौरी से संघर्ष करने वाले अजमेर के सम्राट पृथ्वीराज चौहान के मातृभूमि की रक्षा के लिए, पुत्र का बलिदान करने वाली वीरांगना पन्नाधाय, अंग्रेजों से आजादी की लड़ाई लड़ने वाली 1857 की क्रांति की अग्रदूत रानी लक्ष्मीबाई और ठाकुर खुशाल सिंह तथा सिंध की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पित करने वाले दाहरसेन की शौर्य गाथाओं को दर्शाया गया है। जिनमें सामाजिक यथार्थ का चित्रण एवं दाम्पत्य संबंध का खूबसूरती से चित्रण किया गया है।[10]

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

वर्तमान अर्थव्यवस्था, औद्योगिक क्रान्ति, नारी जागरण और शिक्षा के प्रभाव ने वैवाहिक मूल्यों को नवीन आयाम दिये। स्वच्छन्दता की भावना एवं व्यक्तिवादी जीवन दर्शन ने विवाह की परम्परागत धारणा में आमूल–चूल परिवर्तन कर दिया। विवाहित जीवन में तलाक के प्रवेश से वैवाहिक मूल्यों को आघात पहुंचा है।[11] प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा–विवाह, विलम्बित विवाह आदि के प्रति मूल्यगत धारणा विकसित हो रही है। विवाह सम्बन्धी बदलते हुए दृष्टिकोण का निरुपण उमेश कुमार चौरसिया जी के नाटकों में स्पष्ट देखा जा सकता है।

प्राचीन काल में पति–पत्नी के बीच शारीरिक सम्बन्धों को वैवाहिक नियम के अंतर्गत बांधा गया था। सामाजिक मर्यादा के अनुसार किसी पत्नी का अन्य किसी पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध रखना अनैतिक था। परन्तु आधुनिक युग में यौन सम्बन्ध अनेक पुराने मानदण्डों को पीछे छोड़ चुके हैं। यौन मुक्ति एक आवश्यकता बन गई है। पति–पत्नी की पवित्रता वाला किस्सा प्राय समाप्त सा प्रतीत हो रहा है।[12]

इसके अतिरिक्त सामाजिक सन्दर्भ में भी साहित्य का अपना विशिष्ट महत्व होता है। साहित्यकार समकालीन स्थितियों के बीच कई बार सामान्यजन को दिशा संकेत करता है, सवालों को उनके सही रूप में प्रस्तुत कर उनके हल खोजने का प्रयास करता है। ऐसे किसी श्रेष्ठ साहित्यकार की मृत्यु के बाद उसका 'स्मारक बनाने की प्रथा है। इस प्रकार की प्रथा स्थापित करने का प्रयोजन यही है कि साहित्यकार जिन मूल्यों को स्थापित कर गया है, संघर्ष की जो प्रेरणा दे गया है, वह सब उसके पीछे से जीवित रहे, उसके साथ ही समाप्त न हो जाये। इस प्रकार के स्मारक साहित्यिक मूल्यों की सुरक्षा में सहयोगी हो सके। परन्तु आज किसी साहित्यकार की मृत्यु पर आयोजित शोक सभा या स्मारक स्थापित करने का प्रस्ताव अश्रद्धापूर्ण औपचारिकता मात्र रह गयी है।[14] वह केवल एक खानापूर्ति रह जाती है। इस प्रकार की सभाओं में साहित्यकार के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के स्थान पर वक्ता इस बात का प्रयत्न ज्यादा करता है कि अपना महत्व स्थापित कर सके। इस प्रकार उस साहित्यकार को उस नेपथ्य में डाल देता है।[15]

यह भी एक विडम्बना ही है कि साहित्यकार के जीवित होने की अवस्था में उसे केवल उपेक्षा ही मिलती है। कहीं से किसी प्रकार का सहयोग उसे प्राप्त नहीं होता। परन्तु मृत्यु के बाद उसकी शोक सभाएं आयोजित करने का दिखावटी प्रदर्शन किया जाता है जो भीतर से एकदम खोखला होता है।[16]

संस्कृति का अंकन

उत्तर सांस्कृतिक प्रदेशों का सीमांकन भाषा, बोली, धर्म, रीति–रिवाज आदि सांस्कृतिक लक्षणों के आधार पर भौगोलिक सन्दर्भ में किया जाता है। इस दृष्टि से राजस्थान को मुख्यतः राजस्थानी भाषा तथा इसकी बोलियों

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

के आधार पर ही सांस्कृतिक प्रदेशों में विभाजिन किया जा सकता है दूसरा आधार रीति–रिवाज परम्पराएं हो सकती हैं राजस्थान को निम्नलिखित सांस्कृतिक प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता हैः–

मारवाड़सांस्कृतिक प्रदेश– इसका विस्तार पश्चिमी राजस्थान में जोधपुर, नागौर, बीकानेर, बाड़मेर, जैसलमेर, जालौर, सिरोही तथा पाली में है। यहां मारवाड़ी बोली बोलते हैं। यह प्रदेश साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध है यहां ओज, भक्ति, वीर रस का भण्डार है। जैन साहित्य इस बोली की धरोहर है। साहित्यिक मारवाड़ी डिंगल कही जाती है। इसकी उप बोलियों में ढरकी, थली नागौरी, बीकानेरी, बागड़ी, खैराड़ी, गोड़वाड़ी देवड़ावाटी हैं। यह प्रदेश अभावों का पर्याय है जिसके कारण इस प्रदेश के मूल्यों में गहराई देखने को मिलती है।[17]

मेवाड़सांस्कृतिक प्रदेश–इसका विस्तारउदयपुर, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ में है जहां मेवाड़ी बोली का प्रचलन है। कवियों, चित्रकारों लेखकों के लिए प्रेरणा स्रोत वीरता शौर्य का प्रतीक रहा है। यहां की स्थापत्यकला की उत्कृष्टता विश्व प्रसिद्ध है। यहां पर मेवाड़ में सफेद अंगरखी सफेद धोती, लाल या केसरिया पगड़ी पहनकर गैरिये (गैर नृत्य करने वाले) होली पर गैर नृत्य करते हैं। इस क्षेत्र में आदिवासी संस्कृति व उसके मूल्यों की छाप देखने को मिलती है तथा पर्यावरण संरक्षण भी देखने को मिलता है।[18]

हाड़ौतीसांस्कृतिक प्रदेश– इसकाविस्तार हाड़ौती एवं मालवी बोली क्षेत्रों में हैं। कोटा, बारां, बूंदी, झालावाड़, शाहपुरा (भीलवाड़ा) पूर्वी उदयपुर में हाड़ौती तथा झालावाड़, कोटा प्रतापगढ़ में मालवी बोली प्रचलित है। स्थाप्त्यकला, मूर्तिकला में यहाँ की संस्कृति का अंकन हुआ है।

मेवातीसांस्कृतिक प्रदेश–अलवर, भरतपुर,धौलपुर तथा पूर्वी करौली का वह क्षेत्र जहां लोग मेवाती एवं अहीरवाटी बोली बोलते हैं। यह प्राचीन काल में मत्स्य जनपद था। मेवाती प्रदेश संत लालदास, चरणदास, दया बाई, सहजो बाई, डूंगर सिंह, खक्के आदि संतों की रंगस्थली रहा है। अलवर भरतपुर का बम नृत्य यहां की पहचान है। इस क्षेत्र पर ब्रज संस्कृति का प्रभाव दृष्टि गोचर होता है।

ढूंढाड़सांस्कृतिक प्रदेश–जयपुर, टोंक,लावा, किशनगढ़ (अजमेर) अजमेर मेरवाड़ा का ढूंढाड़ी बोली वाला क्षेत्र इसमें सम्मिलित है। अजमेर मेरवाड़ा में मारवाड़ी–मेवाड़ी की मिश्रित बोली रागड़ी बोलते हैं। दादू पंथ का अधिकांश साहित्य इसी बोली में लिपिबद्ध है। तोरावाटी इसकी उप बोली है। जयपुर की गणगौर इस प्रदेश की पहचान है। इस क्षेत्र के लोग वन उत्पाद संग्रहण यानि प्राथमिक क्षेत्र में ज्यादा तल्लीन है।[19]

वागड़सांस्कृतिक प्रदेश– इनमेंवागड़ी बोली के डूंगरपुर, बांसवाड़ा, तथा दक्षिण–पश्चिमी उदयपुर क्षेत्र सम्मिलित हैं। जनजातियों की लोक परम्पराओं की पहचान इस प्रदेश की विशिष्टता है। यहां पर सर्वाधिक भील रहते हैं। डूंगरपुर की हस्तशिल्प एवं वास्तुशिल्प दर्शनीय है।

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

शेखावाटीसांस्कृतिक प्रदेश– सीकर,झुंझुनूं तथा चुरू का शेखावाटी बोली वाला क्षेत्र इसमें सम्मिलित है। शेखावाटी बोली मारवाड़ी बोली की ही उपबोली है, लेकिन शेखावाटी की संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है। यहां की हवेलियों की अनोखी वास्तुकला एवं आकर्षक भित्ति चित्र क्षेत्र की पहचान हैं। शेखावाटी का चंग नृत्य गीदड़ नृत्य महत्वपूर्ण है।

उमेश कुमार चौरसिया की पुस्तक 'विद्यालयी बाल नाटक' स्कूली विद्यार्थियों के लिए उपयोगी दस रोचक एवं प्रेरक बाल नाटकों का संग्रह है। ये सभी नाटक बच्चों को सिविक सेंस, दैनिक व्यवहार, जीवन मूल्य इत्यादि के बारे में अत्यंत रोचकता और हास्यप्रद संवादों के माध्यम से बताने और सिखाने वाले लघु नाटक हैं। इनको देशभर में अनेकानेक विद्यालयों में सफलतापूर्वक मंचित किया जाता रहा है। इनकी प्रस्तुति बच्चों के साथ–साथ शिक्षकों और अभिभावकों को भी प्रभावित करती है। निश्चय ही चौरसिया ने इस पुस्तक द्वारा संस्कृति व मूल्य–बोध को उजागर किया तथा बच्चों को मूल्यों की ओर अग्रसर करने का कार्य किया।

अन्य पुस्तक 'असली सुगंध' दस रोचक बाल नाटकों का संग्रह है। ये सभी नाटक बहुत ही मनोरंजक होने के साथ–साथ बच्चों को सामाजिक परिवेश, भारत के ऐतिहासिक गौरव, पर्यावरण और जीवन मूल्यों के बारे में सुरूचिपूर्ण जानकारी देते हुए प्रेरणा देने वाले हैं। इन सभी का देशभर में विविध रंगमंचों सहित अनेकानेक विद्यालयों में सफलतापूर्वक मंचन किया गया है।[20]

'अटल रहो और वीर बनो! जीवन में कर्तव्य कठोर है, सपनों के पंख लग गए हैं।' स्वामी विवेकानंद के इन भावों को सुंदर ढंग से प्रस्तुत करने के लिए सुपरिचित नाटककार उमेश कुमार चौरसिया का लिखा बाल नाटक 'मेधावी नरेन्द्र' हाल ही में देश के प्रतिष्ठित संस्थान राष्ट्रीय पुस्तक न्यास नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। स्वामी विवेकानंद के बाल्य जीवन पर रचित यह नाटक साहित्य जगत और बच्चों में लोकप्रिय हो रहा है, इसका प्रमाण यह है कि प्रकाशन के तीन माह में ही एनबीटी को इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित करना पड़ा है और दो वर्षों में चार संस्करण प्रकाशित करने पड़े हैं।[21] बालक नरेन्द्र के बाल अवस्था के जिज्ञासु मन को रेखांकित करता हुआ ये बाल नाटक बहुत ही सहज और सरल भाषा में लिखा गया गया है।[5] यूं तो उमेश के बहुत से नाटक प्रकाशित हुए हैं लेकिन यह नाटक अद्भुत है। एनबीटी ने इसे आकर्षक कलेवर व प्रसिद्ध चित्रकार पार्थ सेनगुप्ता के बनाये सुन्दर रंगीन चित्रों से सजाया है।[22]

बच्चों के सम्मुख किसी भी कहानी को प्रस्तुत करने का सबसे सशक्त माध्यम है नाटक। बत्तीस पृष्ठों में संजोया गया यह रोचक और प्रभावी बाल नाटक बच्चों के लिए अनुपम उपहार है। इस नाटक में कुल छः दृश्य हैं जिनमें रोचक, सरल और मनोरंजक संवादों और प्रसंगों के माध्यम से विवेकानंद के बचपन उदार, दयालु, कुशल एवं नटखटता पूर्ण छवि को उकेरा गया है। बच्चे नाटक से स्वामी विवेकानंद के विचारों को

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

समझ सकेंगे। नाटक पढ़ने में भी रुचिकर है और इसका मंचन करना भी बहुत ही सरल है।[23] इस प्रकार चौरसिया जी ने संस्कृति व मूल्यों को रेखांकित किया जिसके लिए समस्त हिन्दी व राजस्थानी जगत आपका ऋणी है। क्योंकि भारतीय सभ्यता व संस्कृति के कारण ही भारत विश्व गुरू के ओहदे पर आसीन हुआ जो आपने एक बार पुनः स्मरण आपकी लेखनी से करवाया।[24]

मानवीय संवेदना व चिन्तन का चित्रण

21वीं सदी नाटककारों ने समाज के जिस रूप को देखा उसको उसी रूप में दर्शाया है। 21वीं सदी के नाटक समाज में विकृत हो मानवीय संवेदनाएं, बिखरते सामाजिक सम्बन्ध, विघटित हो रहे नैतिक मूल्य और तार–तार होती संस्कृति, भ्रष्टाचार तथा संयुक्त परिवारों का टूटना तथा नारी के प्रति हीन दृष्टिकोण को अपनी विषय वस्तु बताया है। नाटक वास्तव में अन्य साहित्यिक विधाओं में विशिष्ट और सर्वोत्तम है। नाटक के रसिक दर्शक होते हैं, शेष साहित्य के श्रोता।[26] 21वीं सदी के नाटकों के माध्यम से सुधारवादी दृष्टि का प्रचार–प्रसार अधिक हुआ है। मानव के हृदय में नवीन चेतना का सृजन कर समाज को नवीनता और अखण्डता की ओर ले जाने का प्रयास किया है। 21वीं शताब्दी के नाटकों में सजीवता लाने के लिए नाटक के तत्वाधान और रंगमंचीय प्रस्तुति की ओर विशेष ध्यान दिया है। जिसके नाटकों के प्रति जनमानस का दृष्टिकोण परिवर्तित हुआ है। अभिनेयताका गम्भीर अध्ययन करने के उपरांत रंगमंच के प्रति एक सम्पूर्ण और खुली दृष्टि रखकर हिन्दी नाटक और रंगमंच के लेखन अभिनय कला, निर्देशन मंच–परिकल्पना, प्रकाश व्यवस्था आदि सभी संसाधनों का प्रयोग के साथ उनमें नवीन अत्याधुनिक उपकरणों का प्रयोग तथा नवीन प्रयोगशील दृष्टि अपनाकर हिन्दी नाट्य परम्परा को सशक्त और पोषकता प्रदान करने का प्रयास किया है। रंगमंचीय सफलता की इससे बड़ी उपलब्धियां क्या होगी कि आज अन्य भाषाओं के नाटक भी राष्ट्रीय स्तर पर अपने को प्रतिष्ठित करने के लिए हिन्दी रंगमंच का आश्रय लेने को बाध्य हो रहे है।[27]

21 वीं शताब्दी में महत्त्वपूर्ण नाटकों को लिया गया है। इनमें अधिकतर नाटक रंगमंच पर खेले जा चुके है। 21वीं सदी का नाटककार मानवीय संवेदना के बहुविध रूपों को रंगमंचीय दृष्टि से पचाकर शिल्प दृष्टि से परम्परित और नवीन नाट्य शैलियों का अद्भुत सम्मिश्रण कर रंगमंच को नयी दिशा दे रहा है। जीवन के एकान्त क्षणों में जब मानव जीवन में फैले हुए परम सत्य का दर्शन करने के लिये अपनी आकुल भावना का अभिसार करता है और आराधना की विभिन्न भूमिकाओं में आत्मदर्शन करता हुआ जब वह विश्व दृश्य बन जाता है। तब उसको कहा जाता है 'कलाकार'।[28] ये कलाकार अतीत के चित्रों को अपनी भावनाओं की तूलिका से चित्रित करता हुआ अपने भावों, विचारों और अनुरागों के द्वारा मानवता की सजीव प्रतिमा स्थापित करना चाहता है। वह अपने व्यापार जगत का समस्त हर्ष–विषाद, उत्थान– पतन, ह्रास–विलास, सुख–दुखः,

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

अभाव–पूर्णता आदि को लेकर निर्माण कार्य में व्यस्त रहता है। उसकी चिन्तन धारा परम से लेकर अवम तक और अवम से लेकर परम तक निरन्तर प्रवाहित रहती है। इसीलिए उसके स्वप्नों का संसार बड़ा ही सुखद एवं मनोरम होता है। कलाकार की समस्त कृति के मूल में उसकी चेतना और उसकी अनुभूति ही प्रधान होती है। समस्त शास्त्रों एवं कलाओं से युक्त नाटक की रचना इसी चेतना और अनुभूति का परिणाम है। चौरसिया जी एक ऐसे नाटककार है जो बात को मात्र कह देना ही नहीं बल्कि बात की सच्चाई, गहराई और उपादेयता को नाप लेना भी उतना ही आवश्यक समझते है । वे अपने नाटकों के माध्यम से सामाजिक विषमता व संघर्ष के बन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ने का आह्वान करते है । उनके साहित्य में सर्वत्र मानवीय करूणा, मानवीय मूल्य व नैतिकता विद्यमान है। चौरसिया जी अपनी तूलिका (लेखनी) द्वारा मानवीय संवेदना से किनारा करते भारतीय जनमानस को झकझोरा तथा मूल्यों को पुर्नस्थापित किया।

शौर्य गाथाओ के लेखक चौरसिया जी की लेखकीय संवेदना का आधार सामाजिक परिस्थितिजन्य मानवीय पीड़ा है।[29] जनसामान्य के प्रति समर्पित चौरसिया जी का लेखन यथार्थ की ठोस जमीन पर अवलम्बित है। अभिनेय क्षणों की स्वाभाविकता की रक्षा के लिए दिए गए रंग निर्देश एकदम सटीक और सम्भावनापूर्ण हैं। नाट्य–शिल्प के लचीलेपन के कारण निर्देशक सुविधानुसार प्रयोग कर सकते हैं और चौरसिया जी के निर्देशन में प्रस्तुति के विषय में कहा गया है कि 'कुन्ती की व्यथा' के अभिशप्त पात्र और उनकी जर्जरता, पराजय, निराशा और टूटन से ग्रस्त, ध्वस्त पृष्ठभूमि में व्याप्त काली आँधी की छायाओं को मूर्त रूप देने के लिए कोटला के खंडहरों के बीच एक बुर्ज, टूटे दरवाजे, सीढ़ियों और रथ–चक्र वाले मुक्ताकाशी मंच का आश्रय लिया गया। स्पष्ट है कि यह परिवेश और मंच–सज्जा अपने–आप में नाटक की विषय–वस्तु की भयावहता को प्रतिबिम्बित करने में पूर्ण समर्थ था।[30] ध्वस्त खंडहर की पृष्ठभूमि में मृत्यु के प्रतीक गिद्ध समूह, सत्य की पराजय का प्रतीक टूटे हुए रथ का पहिया, बुझे हुए मन की तरह प्रकाशहीन मार्ग, कोने–कोने में छिपा बैठा अन्धेरे का अहेरी आखेटक, भूतों की परछाई की तरह घूमते कौरव कुल गौरव– इन सबको प्रभावी रूप से दिखाना किसी प्रेक्षागृह की सीमाओं में सम्भव नहीं और न उपयुक्त ही। उमेश कुमार चौरसिया जी ने इस लघु नाटक में मानवीय संवेदना व चिन्तन का चित्रण बहुत ही खूबसूरती से किया गया है।[31]

चौरसिया जी की रचनाओं में भारतीय जनमानस के नायक के रूप में प्रतिष्ठापित ऐतिहासिक पात्रों का जीवंत दर्शन भारत की प्राचीन धरोहर को संजोने हेतु वर्णित है। इनके बाल नाटक जहाँ राष्ट्रभाव को जगाते हैं, वहीं पर्यावरण के प्रति प्रेम भी दर्शाते हैं। एक साहित्यकार की रचनाधर्मिता तभी सार्थक है, जब वह समाज के लिए, राष्ट्र के लिए कुछ सार्थक कर पाए। बाल मनोविज्ञान को समझते हुए इनका साहित्य जहाँ उनमें

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

राष्ट्रभक्ति और देशप्रेम के भाव भरता है, वहीं युवामन को औदात्य से जोड़कर उनके जीवन को दिशा देने का भी महनीय कार्य करते हैं।[32]

उमेश कुमार चौरसिया जी का जितना अधिकार हिन्दी पर है, उतना ही मायड़ भाषा राजस्थानी पर भी है। 'सिराध रो दिन' श्री उमेश जी की पाँच राजस्थान हास्य एकांकियों का संकलन है। ऐसा ही दूसरा संकलन 'सुख सै दुःखी' भी है। हास्य रचना में सहायक होता है, तभी अरस्तू कॉमेडी को एक बेहतरीन विधा मानते हैं। चौरसिया जी ने उसी पद्धति को कुशलतापूर्वक अपनाया है। मन को आत्मीयता से विजड़ित कर मंत्रमुग्ध करने की अद्भुत क्षमता लोकभाषा में होती है। इन एकांकियों में ऐसी विशेषता सर्वत्र देखी जा सकती है।[33] ये संग्रह लोकभाषा के मोह और उसके माधुर्य को संरक्षित और सहेजने के साथ ही उसे नव पौध तक हस्तान्तरित करने में भी सफल हैं। इसी में से एक 'म्हूँ तो भूलगो' के 120 से अधिक प्रदर्शन देशभर में हुए हैं।

'सूर्यपुत्र कर्ण' उनका एक विलक्षण राजस्थानी नाटक है। इसमें कर्ण की व्यथा, स्थिति, विवशता, कर्तव्य और स्वप्नों को प्रभावी रूप से उकेरा गया है।

आधुनिक परिवेश में पाश्चात्य प्रभाव

भारतीय जीवन पर पश्चिम के प्रभाव के सम्बन्ध में श्री हुमायूँ कबीर ने लिखा है– "चपल यूरोपीय भावनाओं ने प्रत्येक वस्तु की सूक्ष्म परीक्षा की। एक ओर तो भौतिक जीवन की अवस्थाओं में परिवर्तन हो गया। दूसरी ओर विश्वासों और परम्पराओं के आधारों को नष्ट कर दिया गया।" पश्चिम का यह प्रभाव भारतीय जीवन में जाति–प्रथा, शिक्षा, सामाजिक जागृति, राजनीतिक जागृति, संयुक्त परिवार व्यवस्था, अर्थ–व्यवस्था, विवाह की संस्था, अस्पृश्यता तथा रीति–रिवाजों आदि पर पड़ा। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से भारत में जाति–प्रथा के बन्धन टूटने लगे। पाश्चात्य–सभ्यता के रंग में रंगकर सभी जातियों का खान–पान वेशभूषा, रहन–सहन, रीति–रिवाज आदि एक से हो गए। उनमें जाति के स्थान पर वर्ग का भेद दिखाई देने लगा।[34]

आज समाज में जो वैमानस्य फैलता जा रहा है उसका मूल कारण भारतीय संस्कृति व उसके मूल्यों का अवमूल्य ही है।[35]

उमेश कुमार चौरसिया जी कहते है कि युवा वर्ग पर पश्चिमी सभ्यता का अत्यधिक प्रभाव दिखने लगा है। कई बार ऐसा प्रतीत होता है मानो युवाओं में अपनी सभ्यता, संस्कृति और मान्यताओं से लगाव नहीं है। युवा वर्ग का गलत रास्तों पर जाना भी पश्चिमी सभ्यता के बढ़ते परिणाम का ही फल है। आज का युवा भौतिक चकाचौंध को ही परम सत्य मानने लगा है जिसके कारण पाश्चात्यकरन से कोई परहेज नहीं कर रहा है तथा उसमें डूबता ही जा रहा है जो बूरे स्वप्न से कम नहीं है। समय रहते साहित्यकार जगाते का वन्दनीय कार्य

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

कर रहे है। भारतीय समाज और युवा वर्ग पर यदि पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव इसी प्रकार बढ़ता रहा, तो भारतीय संस्कृति खतरे में पड़ सकती है। साथ ही पढ़ाई के प्रति उदासीनता भी बच्चों को गलत राह पर ले जाती हैं। युवाओं में भटकाव के पीछे एकल परिवार भी महत्त्वपूर्ण कारक है। आज दुनिया भौतिकतावादी हो गई है और लोगों की जरूरतें बढ़ती जा रही हैं। इसलिए उनके अंदर तनाव और फ्रस्टेशन बढ़ता जाता हैं। अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने बच्चों को अपनी संस्कृति से भी अवगत कराएं, ताकि उनको सही दिशा मिल सके। नयी पीढ़ी और युवाओं के अन्तर्मन में भी भारतीयता विद्यमान है, आवश्यकता है उसे जाग्रत करने की, उनको सही मार्ग दिखाने की, और यह दायित्व अभिभावकों और शिक्षकों का ही है। स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि मेरा विश्वास युवा पीढ़ी में है, मेरे कार्यकर्ता यहीं से आएंगे और वे सिंह की भांति समस्त समस्याओं का समाधान कर देंगे। निश्चित ही यह क्षमता भारतीय युवाओं में है।

उमेश कुमार चौरसिया जी अपने नाटकों के माध्यम से धर्म, पारम्परिक रीति–रिवाज और सांस्कृतिक–सामाजिक मेलों के प्रति नई पीढ़ी के रूझान को बढ़ाने, समाज को दिशाहीन बना रहे पाश्चात्यीकरण के प्रति सजग करने और भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव का भान कराने का सार्थक प्रयत्न करते रहे हैं। तथा विदेशों में भारतीय वेद, गीता व धर्मग्रन्थों का अध्ययन व अनुशीलन हो रहा है।

बाल्यावस्था से ही परिवार में बच्चों को अच्छे संस्कार और मानवीय मूल्यों की शिक्षा दी जानी चाहिए। उनके अनुचित व्यवहार को नजरअंदाज ना करके उन्हें समझाना चाहिए, ताकि उनकी छोटी गलतियां भविष्य में अपराध का रूप ना ले सकें। साथ ही आसपास की संदिग्ध गतिविधियों के प्रति सामाजिक जागरूकता और सजगता के द्वारा निरंतर हो रहे अपराधों को रोका जा सकता है।[36]

उमेश कुमार चौरसिया जी का यह बाल नाटक संग्रह 'विद्यालयी बाल नाटक' स्कूली विद्यार्थियों के लिए उपयोगी दस रोचक एवं प्रेरक बाल नाटकों का संग्रह है। ये सभी नाटक बच्चों को सिविक सेंस, दैनिक व्यवहार, जीवन मूल्य इत्यादि के बारे में अत्यंत रोचकता और हास्यप्रद संवादों के माध्यम से बताने और सिखाने वाले लघु नाटक हैं। इनको देशभर में अनेकानेक विद्यालयों में सफलतापूर्वक मंचित किया जाता रहा है। इनकी प्रस्तुति बच्चों के साथ– साथ शिक्षकों और अभिभावकों को भी प्रभावित करती है।

ग्रामीण व शहरी जीवन के विविध आयाम

आजादी के कई दशक बाद भी भारत इतनी असमानताओं से भरा पड़ा है कि अक्सर यह कहा जाता है कि यहां दो देश हैं –एक भारत एवं एक इंडिया। यह देश के ग्रामीण एवं शहरी इलाकों की दो अलग–अलग वास्तविकताओं को दर्शाता है लेकिन यह आवश्यक है कि ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही क्षेत्रों के निवासी एक दूसरे के साथ सद्भाव पूर्वक रहें। राष्ट्रीय सर्वेक्षण संगठन के अनुसार वर्ष 2009–10 में देश के ग्रामीण इलाकों

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

में औसत प्रति व्यक्ति मासिक खर्च 1054 रुपए था, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह में 1984 रूपए था, जिसका मतलब है कि शहरी निवासियों का प्रति व्यक्ति खर्च गांवों में रहने वाले लोगों की तुलना में 88% प्रतिशत अधिक था। उमेश कुमार चौरसिया जी बताते है कि भारत मुख्य रुप से एक कृषि आधारित देश है। किसान ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं।[37] वे अपने खेतों में अनाज और सब्जियां उगाने के लिए कड़ा परिश्रम करते हैं। वे फसलों की सिंचाई के लिए तालाबों और नहरों में पानी के संरक्षण करते हैं। किसानों शहरों की भागदौड़ एवं हलचलों से दूर एवं प्रकृति के करीब होता है। वहां यदि भूमि और जाति के पूर्वाग्रहों एवं प्रचलित अंधविश्वासों पर होने वाले संघर्षों को अगर छोड़ दे तो हर जगह शांति और सौहार्द का माहौल होता है। दूसरी ओर, शहरों में लोग हमेशा वक्त की कमी से जूझते है, यहां हर कार्य काफी तेजी के साथ करना होता है जीवन में कोई उत्साह नही दिखता है। हमेशा अच्छा प्रदर्शन करने की होड़ का जबरदस्त तनाव बना रहता है और व्यस्त शहरी जीवन की वजह से स्वास्थ्य संबंधी अन्य परेशानियां भी सामने आती हैं। उमेश कुमार चौरसिया जी ने बताया है कि शहरी निवासियों को अपने मित्रों, पड़ोसियों, रिश्तेदारों, यहां तक कि अपने परिवार के सदस्यों से मिलने के लिए भी काफी कम समय होता है। जैसे–जैसे शहरों में रहने वाले लोगों की आवश्यकताएं एवं अपेक्षित संसाधनों की लागत बढ़ती जा रही हैं पैसे के पीछे भागने की प्रवृत्ति भी शहरों में लगातार बढ़ती जा रही है और यह उनके जीवन का प्रमुख कारक बन गया लगता है। इस सबके उपरान्त भी अत्यधिक धन जमा कर लेने के बावजूद भी शांति और आनन्द अभी भी ऐसे लोगों से कोसों दूर है।

वहीं उमेश कुमार चौरसिया जी कहते है कि गांवों में एवं शहर में रहने वाले लोगों के जीवन में सिर्फ इतना ही फर्क नहीं है। शहरी और ग्रामीण जीवन एकदूसरे के बहुत भिन्न है और इन दोनों जीवनों में जमीन आसमान का फर्क अभी भी दिखता है। एक तरफ जहां ग्रामीण जीवन में अब भी संयुक्त परिवार, मित्रों, रिश्तेदारों और साधारण–सहयोगात्मक जीवन को महत्व दिया जाता है। वही शहरी जीवन में अधिकांश लोग एकाकी, स्वार्थी तथा चकाचौंध भरा जीवन जीने की प्रवृत्ति वाले दिखाई देते है।

गांवों और शहरों के पहलू

गांवों में ज्यादातर आधारभूत सुविधाओं जैसे बिजली, स्कूलों, नर्सिंग होम एवं कारखाने जहां लोगों को रोजगार मिलता है आदि की कमी होती है। गांवों में स्वयं के परिवहन के साधन की व्यवस्था की अनुपलब्धता की स्थिति में ग्रामीणों को कई मील तक पैदल चलना होता है। गांवों में केवल मौसमी रोजगार उपलब्ध होते हैं एवं ज्यादातर लोगों को वहां लाभप्रद रोजगार उपलब्ध नहीं हैं। इन सभी कारकों की वजह से अच्छी शिक्षा, रोजगार और जीवन की सुख–सुविधाओं की तलाश में ग्रामीण लोग बड़े पैमाने पर शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन कर रहे हैं।

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

शहरों में भी जीवन का अपना एक अलग नकारात्मक पहलू है – यह दबाव, तनाव और चिंता से भरा पड़ा है। यहाँ के लोगों के पास आराम और सुविधाओं की कई सामग्रियां होती हैं लेकिन उन्हें मानसिक शांति नसीब नहीं होती है। वे निजी और पेशेवर जीवन से संबंधित कार्यों में इतना व्यस्त होते हैं कि वे कभी–कभी वे भी अपने पड़ोसी तक को नहीं जानते।

शहरी जीवन वरदान या अभिशाप?

उमेश कुमार चौरसिया जी बताते है कि शहरी जीवन कई मायनों में एक वरदान है, लेकिन दूसरी ओर यह एक अभिशाप भी है। हर साल शहरों की आबादी कई गुना बढ़ रही है, उसी अनुपात में सीमेंट कंकरीट के मकानों बनते जा रहे हैं, जंगल व हरियाली लुप्त सी होती जा रही है, वाहनों की लम्बी कतारें दिन पर दिन बढ़ती जा रही हैं, इन्फ्रास्ट्रक्चर को ही विकास की धुरी मानकर शहरों के मूल स्वरूप को बिगाड़ा जा रहा है, आधुनिकता की दौड़ में व्याभिचार, भ्रष्टाचार व अनैतिकता को बढ़ावा मिल रहा है, और इस सबके कारण शहरी जीवन अधिकांशतः अशांत, प्रदूषणभरा और असंवेदनशील दिखाई देने लगा है।

भारत गांवों का देश कहलाता है। देश की आबादी का सड़सठ प्रतिशत अभी भी गांवों में रहती है। जो लोग गांवों में रहते हैं उनके लिए शहरी क्षेत्र का जीवन कठिनाइयों से भरा है। उन्हें शहरों में बड़े पैमाने पर वाहनों से होने वाला प्रदूषण, लगातार होता हुआ शोर, भीड़ और धुआं काफी असहज महसूस कराता है। लेकिन शहरों में रहने वाले लोगों को उनके जीवन की व्यस्तता और तेजी से प्यार है। उन्हें धन, शक्ति और अच्छी सामाजिक स्थिति प्राप्त करने के अपने सपनों का पीछा करना प्रिय है। प्रत्येक दिन जीवित रहने के लिए जीवन की भागदौड़ में उन्हें नई–नई समस्याओं और जटिलताओं से जूझना पड़ता है।

उमेश कुमार चौरसिया जी ने कहा है कि निश्चित रूप से गांवों और शहरों में रहने वाले लोगों की जीवन शैली में एक बड़ा अंतर है। दोनों ही जीवन शैलियों में एक दूसरे के अच्छे पहलुओं को शामिल करके संतुलन स्थापित किए जाने की आवश्यकता है। भारत की अधिकतर जनसंख्या गाँव में रहती है लेकिन समय के साथ–साथ लोग शहरों की तरफ आकर्षित हुए हैं और शहरों में जाकर रहना आरंभ किया है। ऐसे में शहर में व्याप्त कई विकृतियां अब गांवों में भी दिखाई देने लगी हैं। इसके प्रति भी जागरूक होने की आज आवश्यकता है।

उमेश कुमार चौरसिया जी ने ग्रामीण जीवन में परेशानियां के बारे में भी बताया है कि ग्रामीण जीवन में परेशानियां भी बहुत हैं। वहाँ अकसर भूमि से संबंधित विवाद होते रहते हैं और कई बार एक ही गोत्र में प्रेम विवाह की वजह से भी रक्तपात एवं हिंसा की घटनाएं भी हो जाती हैं। कई बार ग्राम पंचायतें विभिन्न विवादों पर विचार–विमर्श करते हुए बहुत कठोर और निर्मम निर्णय सुना देती हैं। जिनसे लोगों का जीवन दुख और

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

दर्द से भरी हुई एक कहानी बन के रह जाता है। कई रूढ़ियां उन्नति के मार्ग को अवरूद्ध करती दिखती हैं, शिक्षा का अत्यधिक प्रसार हुआ है फिर भी अशिक्षा और खास तौर पर स्त्री शिक्षा के प्रति अरूचि अभी भी बनी ही हुई है, इसके कारण ग्रामीणों के छले जाने की घटनाएं भी दिखती हैं।

गांव के लोग अपनी शहरी बाजारों में अपने कृषि की उपज जैसे अनाज, फल और सब्जियों की बिक्री पर निर्भर रहते हैं और साथ ही शहरी लोग ग्रामीण क्षेत्रों से की जा रही जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति के बिना जीवित नहीं रह सकते हैं। गांवों से लोग रोजाना आधुनिक जीवन की नवीनतम सुख–सुविधाओं की आवश्यक वस्तुओं को खरीदने, फिल्म देखने, आनंद मनाने एवं शहरी प्रतिष्ठानों में नौकरी करने के लिए सफर करके शहर आते हैं। वास्तव में भारत का समग्र विकास गांवों और शहरों के सामंजस्यपूर्ण विकास के बिना असंभव है क्योंकि ये दोनों ही एक–दूसरे के पूरक हैं। शहरों का विकास व संसाधन गांवों तक पहुँचें और समाज को नैतिक व मानसिक तौर पर प्रबुद्ध करने वाली गांवों की प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराएं–व्यवस्थाएं शहरी समाज में पुनर्स्थापित हों, इस पर गहन चिन्तन आज जरूरी हो गया है।

उमेश कुमार चौरसिया जी के अनेक नाटक ग्रामीण जीवन को विविध आयामों के रूप में चित्रांकन करती हैं। उनके रचित टूटता भ्रम, चिंपू लोमड़ी, पेड़ की सुनो, नन्हीं हवा, कुंभा का बलिदान, असली सुगंध, आदमी, मेरा भारत, बापू की बाल पोथी, घूंघट (रवीन्द्रनाथ टैगोर की कथा पर), युगप्रेरक विवेकानन्द, सफाई मेरा काम, गुल्ली डण्डा (प्रेमचंन्द की कथा पर), अपना घर (प्रेमचंन्द की कथा पर), राम कबीरा एक है, गंगा की पुकार, जिन्दगी धुँआ ना हो जाए, नव भारत निर्माण करेंगे, स्वच्छता, जल ही जीवन सिराध रो दिन, खीचड़ी रे खीचड़ी, बामण री सीख, चलाक चौधरण, म्हूंतो भूलग्यो, सुख सै दुःखी, ऊपरळौ जाणै, कांबळा रो हिस्सौ, दो ठग, दस का नौ, होस्यार सेठाणी, चाकर मालिक रा, चोर आळी चिड़ी, शेखचिल्ली रो घर, खरगोस री गवाही, निन्नाणू री झाट जैसे अनेक नाटक ग्रामीण परिवेश और शहरी परिस्थितियों का सकारात्मक आकलन करते हुए सही दिशा दिखाते हैं।

संचारक्रांति एवं जीवन मूल्य

वर्तमान परिवेश में वैज्ञानिक संसाधनों ने मानव को चहारदीवारी में कैद कर दिया है। उसी चहारदीवार में उसकी सुख–दुःख की अनुभूतियाँ, हँसी–खुशी का वातावरण उत्पन्न भी होता है और समाप्त भी होता है। उसकी संवेदना इन दीर्घकाय दीवारों को लाँघने में कमजोर पड़ती दिखाई देती है। यथार्थ है कि मानव अपनों के बीच ही अजनबी की भूमिका में आ गया है। उसकी यह भूमिका सांस्कृतिक संकट का संकेत है। आज छोटे–छोटे ऐसे नाटकों की बहुत आवश्यकता है, जिनसे लोगों के अन्तर्मन में मूल्य विकसित किए जा सकें । ऐसे नाटकों को खेलने से उनमें क्रियात्मकता व कल्पनाशक्ति का भी विकास होता है । साथ ही मनोरंजन भी

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

होता है । बड़े नाटकों के लिए समय और संसाधनों की भी बहुत आवश्यकता होती है । अतः लघुनाटकों की उपादेयता और भी बढ़ जाती है । यह नाटक बच्चों व बड़ों सभी के लिए समान रूप से उपयोगी हैं ।

आज नाटक और रंगमंच के लिए सबसे बड़ी चुनौती सिनेमा, टीवी चैनल और इंटरनेट से। यह सवाल भी आज जोर–शोर से उठाया जा रहा है कि मीडिया और बाजारवाद के इस दौर में रंगमंच का क्या महत्व है? क्या उदारीकरण और तकनीकी उन्नति की आड़ में सांस्कृतिक हमले की आड़ में वर्तमान नाटक और रंगमंच अपनी मौलिकता बनाए रखेंगे?

1982 के बाद, दूरदर्शन के राष्ट्रीय प्रसारण ने भारतीय मनोरंजन जगत में व्यापक बदलाव लाया। दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों जैसे धारावाहिकों, फिल्मों, टेलीफिल्म्स, गानों आदि के माध्यम से दर्शकों को घर बैठे हर तरह का मनोरंजन और जानकारी मिलने लगी। जिससे दर्शक लाइव मीडियम थिएटर से दूर होने लगे। 1991–92 के बाद, वाणिज्यिक चैनल की शुरुआत के साथ, स्थिति और भी विकट हो गई और रही सही कसर इंटरनेट ने निकाल दी। गंभीर, सार्थक और प्रायोगिक नाटक के लिए आज दर्शकों की कमी एक चुनौती साबित हो रही है। आज हम देखते हैं कि फिल्मी सितारों और अंग्रेजी सेक्स कॉमेडी के लालच में दर्शक महंगे टिकट खरीदकर सिनेमा हॉल तो जाएंगे लेकिन मुफ्त में थिएटर जाने को भी तैयार नहीं होंगे. अधिकांश फिल्में और टेलीविजन धारावाहिक 'हिंदी' में होने के कारण हिंदी दर्शकों के साथ–साथ थिएटर जाने वालों का भी ध्यान आकर्षित किया है। आज राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय या अन्य रंगमंच–प्रशिक्षण केंद्रों की स्थिति आईआईटी शिक्षा संस्थानों की तरह हो गई है जहां छात्र उच्च शिक्षा लेते हैं और फिर डिग्री लेने के बाद पैसा कमाने के लिए अमेरिका चले जाते हैं। इसी प्रकार नाट्य संस्थानों या नाट्य प्रशिक्षण केन्द्रों से प्रशिक्षित नाट्यकर्मी अपने अनुभव और प्रशिक्षण का लाभ भविष्य में थिएटर और उसके दर्शकों को न देकर छोटे या बड़े पर्दे के दर्शकों तक पहुँचाते हैं।

एक ज्वलंत और गंभीर नाटक बनाना इस बात की गारंटी नहीं है कि दर्शक नाटक देखने आएंगे? अब प्रश्न यह उठता है कि क्या रंगमंच को अपने गम्भीर, प्रामाणिक, उच्च–स्तरीय, गहन अनुभूति वाले रंगमंच को त्यागना पड़ेगा? दर्शकों को आकर्षित करने के लिए कलात्मक दृष्टिकोण के बजाय व्यावसायिक दृष्टिकोण को अपनाना होगा? वास्तव में इन शंकाओं ने वर्तमान नाटक और रंगमंच के अस्तित्व के लिए गंभीर चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं।

हिन्दी नाटक और रंगमंच को सिनेमा, टीवी, इंटरनेट जैसे संचार के माध्यम से जिस स्थिति में रखा गया है, उस पर बहुत चिंता व्यक्त की जा रही है। लेकिन इस स्थिति का मतलब यह नहीं है कि आगे कुछ नहीं हो सकता। इस विषय पर नाटक की आवश्यकता और महत्व को रेखांकित करते हुए सिद्धनाथ कुमार कहते हैं,

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

''आज के युग में रंगमंच के महत्व और आवश्यकता के बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता है। आज रंगमंच की आवश्यकता को नकारना यह कहने जैसा है कि फोटोग्राफी के युग में पेंटिंग की कोई जरूरत नहीं है।'' लेकिन आज भी दुनिया के किसी भी देश में रंगमंच की स्थिति संतोषजनक नहीं है। आज हमें शहरों में हर जगह थिएटर मिल जाएंगे लेकिन रंगमंच क्यों नहीं? यह प्रश्न आज के सांस्कृतिक संकट की ओर इशारा करता है।

समाकलन

उमेश कुमार चौरसिया जी के नाटकों का अध्ययन हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचाता है कि पारिवारिक वातावरण, शिक्षा –दीक्षा तथा अनुप्रासंगिक क्रिया –कलापों के एकीकृत रूप से नाटककार उमेश कुमार चौरसिया जी का व्यक्तित्व और कृतित्व का निर्माण हुआ ।

यद्यपि उमेश कुमार चौरसिया जी की पकड़ नाटक के साथ अन्य साहित्यिक विधाओं में भी रही है, तो भी इनकी ख्याति नाटककार के रूप में ही वास्तव में अद्वितीय रही । नाटकों के मूल्य चित्रण का अध्ययन कर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि युग परिवर्तन के साथ–साथ व्यक्ति की आस्थाएं और विचार बदल रहे हैं, जिससे मूल्य परिवर्तन हो रहे हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ है जिसका प्रभाव साहित्य पर पड़ा। स्वतन्त्रता से पूर्व देखे गये स्वप्न स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् टूट गये। देश विभाजन ने व्यक्ति के मन में व्यक्ति के प्रति घृणा की आग भर दी। बेरोजगारी, संत्रास, भय, अकेलापन, अजनबीपन, अलगाव, ऊब, कुण्ठा, विसंगति, अस्थिरता, अस्तित्व की रक्षा तथा अहं की भावना से व्यक्ति कुण्ठित एवं ग्रस्त हो गया। महानगरीय यांत्रिक जीवन में वह इन सब पीड़ाओं को भोग रहा है। वर्तमान अर्थव्यवस्था, औद्योगिक क्रान्ति, नारी जागरण और शिक्षा के प्रभाव ने वैवाहिक मूल्यों को नवीन आयाम दिये। स्वतंत्रता के पश्चात् परिवार की महत्वपूर्ण इकाई पति–पत्नी के सम्बन्धों में विघटन हुआ। स्त्री के विवाह और प्रेम सम्बन्धी दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आया।

पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर आधुनिक सभ्यता में आध्यात्मिक मूल्य मजाक का विषय बन गये हैं। ऐसी सभ्यता में आत्मा की अमरता की बात करना असंगत सा लगता है। स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्रीय तथा साहित्यिक मूल्यों का पूरी तरह ह्रास हुआ है। नैतिकता के सन्दर्भ में समस्त मानवीय मूल्य समाप्त हो गये हैं। मात्र जिजीविषा ही आधारभूत मूल्य रह गया है जिसके लिए व्यक्ति अपनी सामाजिकता, धार्मिकता, नैतिकता, दार्शनिकता आदि को समर्पित कर देता है। वास्तव में उमेश कुमार चौरसिया जी ने राष्ट्रभक्ति के कई उदाहरण अपने नाटकों में प्रस्तुत किये है, कुन्ती की व्यथा, मत चूके चौहान, वीरांगना पन्नाधाय, खूब लड़ी मर्दानी, दाहरसेन का बलिदान और आउवा तुझे प्रणाम जैसे नाटकों में प्रस्तुत बलिदान को इतिहास कभी भी भुला

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

नहीं पायेगा। धन्य है वो धरती जिस पर राष्ट्र पर मर मिटने वाले देशभक्त पैदा हुए। उमेश कुमार चौरसिया राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में सेवारत भी हैं और एक अच्छे रचनाकार एवं रंगकर्मी के रूप में भी सक्रिय रहते हैं। वे तीन दशक से नाट्य निर्देशन भी कर रहे हैं। 'रवींद्रनाथ ठाकुर के बाल नाटक' उनकी इक्कीसवीं प्रकाशित कृति है। उमेश कुमार चौरसिया की कृतियों को देखा जाए तो उन्होंने अधिकांशतः बालोपयोगी नाटकों की रचना की है और वे समय–समय पर विविध बाल नाट्य शिविरों के माध्यम से बच्चों को नाट्य विधा का प्रशिक्षण भी देते हैं।

संक्षेप में कहें तो रंगकर्मी एवं नाटककार को एक सही तथा सार्थक पहचान देने की दिशा में उमेश कुमार चौरसिया जी का स्थान हिन्दी नाटककारों में अग्रगण्य है। उन्होंने अपनी मौलिक दृष्टि, भावपूर्ण संवेदना तथा जीवन के अनुभव – वैविध्य के आधार पर हिन्दी नाटक को कथ्य एवं शिल्प पर परंपरागत दृष्टिकोण से मुक्त कर विकास के नये आयामों से परिचित कराया। और मूल्य बोध को संजीवनी प्रदान की जो आज के अस्त–व्यस्त जीवन में लुप्त से नजर आ रहे है निःसन्देह आपका यह कार्य अनुकरनीय अविस्मरणीय है।

संदर्भ सूची :

[1]. कमलेश्वर , मेरी प्रिय कहानियां, पृ. 56

[2]. वही, मांस का दरिया कहानी, पृ. 129

[3]. कमलेश्वर, खोई हुई दिशाएं कहानी संग्रह

[4]. सं. मधुकर सिंह, कमलेश्वर, पृ. 179

[5]. उमेश कुमार चौरसिया, विद्यालय रंगमंच के देशभक्तिपूर्ण नाटक (दो संस्करण) – विद्यालयों में कई बार खेले जा चुके दस रोचक व प्रेरक नाटकों का संग्रह। राजस्थान साहित्य अकादमी के 'शंभुदयाल सक्सेना बाल साहित्य पुरस्कार 2011–12' से सम्मानित । राजस्थानी ग्रंथागार/वर्ष 2008 व 2010/हिन्दी।

[6]. उमेश कुमार चौरसिया, सिराध रो दिन – राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर के सहयोग से प्रकाशित राजस्थानी लोकगाथाओं पर आधारित पाँच हास्य एकांकियों का संग्रह। अर्चना प्रकाशन/वर्ष 1999/राजस्थानी ।

[7]. उमेश कुमार चौरसिया, साहित्यकार प्रस्तुति योजना : उमेश कुमार चौरसिया (पेज–85)

[8]. उमेश कुमार चौरसिया, देशभक्ति नाटक (दो संस्करण)–संत कबीरदास एवं नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के जीवन पर आधारित दो लघु नाटकों का संग्रह। साहित्यागार 2002 व 2004धहिन्दी।

AIRO JOURNALS
Free / Unpaid
Peer Reviewed
Multidisciplinary
International
ISSN: 2320-3714
Volume:3 Issue:1
July 2022
Impact Factor: 6.3
Subject:Humanities

[9]. उमेश कुमार चौरसिया, प्रेरक बाल एकांकी – छः आधुनिक प्रयोगवादी व प्रेरणास्पद एकांकियों का संग्रह। साहित्यागार/वर्ष 2004/हिन्दी।

[10]. उमेश कुमार चौरसिया, चीं–चीं चिड़िया – नवसाक्षर बच्चों के लिए तीन रोचक नाटिकाएँ विनय पब्लिकेशन्स/वर्ष 2004/हिन्दी।

[11]. उमेश कुमार चौरसिया, गोलू बंदर – नवसाक्षर बच्चों के लिए तीन रोचक नाटिकाएँ। अजमेरा बुक कं./वर्ष 2004/हिन्दी।

[12]. उमेश कुमार चौरसिया, ऐतिहासिक वीर बालकों के नाटक – बच्चों के लिए प्रेरक दो नाटक ।साहित्यागार/वर्ष 2006/हिन्दी।

[13]. उमेश कुमार चौरसिया, ऐतिहासिक बाल एकांकी – बच्चों के लिए प्रेरक दो नाटक । साहित्यागार/ वर्ष 2006/हिन्दी।

[14]. कमलेश्वर, डाक बंगला, पृ. 65

[15]. कमलेश्वर, राजा निरबंसिया कहानी संग्रह, पृ.175

[16]. सं. देवीशंकर अवस्थी, नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति, पृ. 225

[17]. कमलेश्वर, जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह, पृ. 17

[18]. वही, जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह, पृ. 25

[19]. वही, पृ. 27

[20]. कमलेश्वर, एक सड़क सत्तावन गलियां, पृ. 54

[21]. वही, पृ. 59